सामाजिक न्याय की राजनीति के नए आइकॉन

राहुल गांधी

एच.एल. दुसाध

राहुल गांधी
सामाजिक न्याय की राजनीति के नए मसीहा

एच.एल. दुसाध

बहुजन डाइवर्सिटी मिशन

प्रथम संस्करण : 2023

प्रकाशक : **बहुजन डाइवर्सिटी मिशन**
B-1,149/9 किशन गढ़, वसंत कुंज
नई दिल्ली-110070, सम्पर्क : 011-26125973, 9654816191
E-mail : hl.dusadh@gmail.com

© लेखक

मूल्य : 60.00 रुपये

रचना : राहुल गांधी : सामाजिक न्याय की राजनीति के नए मसीहा
लेखक : एच. एल. दुसाध
शब्दांकन : कम्प्यूटेक सिस्टम, शाहदरा, दिल्ली-32
आवरण : कम्प्यूटेक सिस्टम, शाहदरा, दिल्ली-32
मुद्रक : क्विक ऑफसेट, दिल्ली-110094

अनुक्रम

प्रस्तावना	5
लेखकीय	9
कैसे राहुल में दिखने लगेगी नेहरु की छवि!	13
2014: मोदी की सुनामी बाद राजनीति के पंडितों की नज़रों में राहुल गाँधी!	15
क्या राहुल की जगह प्रियंका के होने से परिणाम भिन्न होता!	19
राजनीति के पंडितों की हैसियत : सतही रिपोर्टरों से ज्यादा नहीं!	20
2009 में राजनीति के पंडितों ने राहुल गाँधी को दिया था : 2014 के नरेंद्र मोदी जैसा आदर!	21
लोकसभा चुनाव-2019 की बड़ी उपलब्धि : राहुल गांधी का एक परिपक्व नेता के रूप में उदय!	26
भारत जोड़ो यात्रा : गांधी की दांडी यात्रा के बाद सबसे महत्वपूर्ण पहल!	33
और राहुल बन गए सामाजिक न्याय की राजनीति का नया आइकॉन!	35
सामाजिक न्याय की अपनी खोई जमीन हासिल करने के लिए क्या करे कांग्रेस	37
शक्ति के स्रोतों के बंटवारे में प्राथमिकता देना होगा आधी आबादी को	40
किताब का निष्कर्ष!	41
राहुल गाँधी का परिचय	43

प्रस्तावना

राहुल गांधी की भूमिका, उनकी प्रतिबद्धता और उनकी राजनीतिक क्रियाशीलता को लेकर मेरे संपर्क के दो व्यक्तित्व पिछले एक दशक से अपने विचारों पर दृढ़ हैं– एक सीपीआई के महासचिव डी. राजा और दूसरा बहुजन डायवर्सिटी मिशन के प्रणेता एच.एल. दुसाध।

डी राजा अक्सर कहते रहे हैं कि 'राहुल गांधी कांग्रेस के पहले नेता हैं, जिन्हें कांग्रेस के सबसे खराब दिनों में उसका नेतृत्व करने की जिम्मेवारी मिली। राहुल गांधी एक ऐतिहासिक नियति में अपनी भूमिका के लिए स्थित हुए।'

कांग्रेस अपनी दशकों पुरानी राजनीति में ऐसी स्थिति में कभी नहीं थी, जैसी वह 2014 के बाद पहुँचती चली गयी। एच.एल. दुसाध राहुल को इन खराब दिनों में एक उम्मीद की तरह देखते हैं, कांग्रेस से अधिक देश के लिए। वे मानते हैं कि 'राहुल ट्रेजडी नायक' के रूप में दर्ज होने वाले नहीं।' उनके अनुसार सामाजिक न्याय के रास्ते वे भारतीय राजनीति के नायक सिद्ध होने वाले हैं।

पिछले दिनों, 27 जुलाई 2023 को, भारत में बहुजन डायवर्सिटी मिशन के प्रणेता एच.एल. दुसाध की लोकार्पित दो किताबें 'सामाजिक न्याय की राजनीति के नए आइकॉन, राहुल गांधी' और 'राहुल गांधी कल, आज और कल' किताबें एच.एल. दुसाध की ही निरंतरता में एक दृढ़ विचार को समझने की किताबें हैं कि आखिर कैसे एक 'दूरदर्शी राजनेता' को आरएसएस के काफी योजनाबद्ध तरीके से राजनीति के लिए अनुपयोगी सिद्ध करने की कोशिश के बावजूद सच्चाई इससे अलग है और समय के बुद्धिजीवी इसे समझ भी रहे हैं। लेकिन दुसाध जी यहीं कहाँ थमने वाले थे। वे राहुल गांधी के प्रति अपने विचार को आम जन तक इसलिए पहुंचाने की प्रतिबद्धता से प्रेरित हैं कि 2024 के चुनाव को वे भारतीय राजनीतिक इतिहास में एक ऐसी रेखा की तरह देख रहे हैं, जिसके बाद लोकतंत्र और देश के सामाजिक न्याय की गति को अपने एक निर्णायक मोड़ पर पहुंच जाना है-या तो प्रतिक्रांति के मोड़ पर, या क्रांति की गतिकी की निरंतरता के एक मोड़ पर! इसी प्रतिबद्धता के तहत यह लघु पुस्तिका अब हमारे सामने है-'राहुल गांधी : सामाजिक न्याय की

राजनीति के नए मसीहा'—जो अपनी पृष्ठों और अपने मूल्य के कारण प्रसार की दृष्टि से अधिक संवहनीय है।

दुसाध जी प्रतिबद्धता और मिशन के धनी हैं। बहुजन डायवर्सिटी मिशन (बीडीएम) के जरिये वे हर वर्ष 'डायवर्सिटी डे' का आयोजन करते हैं, मध्यप्रदेश में कांग्रेस की सरकार द्वारा सप्लाई में डायवर्सिटी की एक कोशिश को चिह्नित करते हुए। बीडीएम हर वर्ष दर्ज करता है कि 27 अगस्त 2002 को, तत्कालीन मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह ने अपने राज्य के छात्रावासों और आश्रमों के लिए स्टेशनरी, बिजली का सामान, चादर, दरी, पलंग, टाट-पट्टी, खेलकूद का सामान इत्यादि का नौ लाख उन्नीस हज़ार का क्रय आदेश भोपाल और होशंगाबाद के एससी/एसटी के 34 उद्यमियों के मध्य वितरित कर भारत में 'सप्लायर डाइवर्सिटी' की शुरुआत की थी। राहुल गांधी में डायवर्सिटी के लिए वे एक उचित विजन और नेतृत्व देख रहे हैं।

यह लघु पुस्तिका 2009 से राहुल गांधी की भारतीय राजनीति में भूमिका और उन्हें लेकर मीडिया के लोकप्रिय लोगों की बदलती राय की समीक्षा करती हैं। 2014 के बाद ये राय राहुल गांधी के प्रति अधिक कटु और हमलावर होते गए, जबकि 2009 से इन्हीं लोगों की व्यक्त राय बताते हैं कि इन रायों में कोई स्थिरता नहीं है, सत्ता-सापेक्ष राय रखने वाले लोग राहुल गांधी की छवि आम मानस में ले जाएँ, यह भारतीय राजनीति के लिए बेहद खतरनाक रहा।' एच.एल. दुसाध इन बदलती रायों से अलग राहुल गांधी को 'दूरदर्शी' नेता मानते हैं और अब कांग्रेस के रायपुर कन्वेंशन के बाद उन्हें सामाजिक न्याय का नया मसीहा बता रहे हैं।

इस किताब के लेखन की मंशा ही है—राहुल गांधी के सामाजिक न्याय की भूमिका को अपना समर्थन देना, उसे बल देना ताकि कांग्रेस सहित राजनीतिक दलों को उद्धत हिंदुत्व के प्रभाव से मुक्त रखने का दवाब बने। एच.एल. दुसाध के अनुसार राहुल गांधी तो इससे मुक्त हैं ही। दरअसल कोई राजनेता अपने समर्थक समूहों की वैचारिकी से खाद पानी लेता है और उसके साथ देश को नेतृत्व देने में अपनी भूमिका को सहजता से सम्पादित कर पाता है। विरोधी विचारों के दवाब से निपटने में समर्थक समूहों की वैचारिकी बेहद महत्वपूर्ण होती है। भारत जैसे बहुस्तरीय देश में, जहाँ समाज आज भी प्रगतिशीलता के प्रति, बदलावों के प्रति उतना अनुकूल नहीं है, एक प्रगतिशील राजनीति के लिए, राजनेता के लिए, इन समर्थक दवाब समूहों की बेहद बड़ी भूमिका होती है। इस लिहाज से एच.एल. दुसाध जैसे बदलाव के चिंतकों की भूमिका महत्पूर्ण हो जाती है। इसे इतिहास के आईने में कुछ यूं समझा जा सकता है : जवाहर लाल नेहरू को अपने समय की प्रतिगामी विचारधारा से लड़ने में मजबूती कांग्रेस के भीतर के समाजवादी नेताओं और विचारों से मिलती थी, अपनी शर्तों के साथ कभी संवाद और कभी संघर्ष करने वाले बाबा साहेब डाक्टर अम्बेडकर से मिलती थी। जैसे-जैसे कांग्रेस से समाजवादी बाहर हुए और बाबा साहेब अम्बेडकर

हिन्दू कोड बिल के सवाल पर राजनीति की सक्रियता से सीमित हुए, प्रतिगामी राजनीतिक धारा नेहरू के सामने दवाब की राजनीति खड़ी करने में अपनी सक्रियता बढ़ाती गयी।

राजनीति में समर्थक समूहों और विरोधी समूहों की वैचारिकी के बीच एक नेता, एक प्रणेता काम करता है। पक्ष और विपक्ष दोनों यदि प्रगतिशील हों, अलग-अलग रास्तों से बदलाव का वाहक हों, तो नेता दोनों से खाद-पानी लेता है।

मैं राहुल गांधी की भारत यात्रा में ऐसे दो अलग-अलग प्रकार के दवाब समूहों का उल्लेख करना चाहूंगा। कांग्रेस के ही एक नेता शहनवाज आलम के अनुसार राहुल गांधी को महाराष्ट्र और कर्नाटक में अलग अनुभव हुए। उन्हें वहां कोई मंदिर-मस्जिद जाने को नहीं कह रहा था। कार्यकर्ता उन्हें अन्ना भाऊ साठे, फुले, अम्बेडकर जैसे पुरोगामी/ प्रगतिशील शख्शियत के स्मारक स्थल पर चलने को कहते। इसके पहले जबकि कर्नाटक में उन्हें मंदिर चलने का आग्रह किया जाता।

इन दो दृष्टांतों की पृष्ठभूमि से भी दुसाध जी जैसे बहुजन बुद्धिजीवियों का समर्थन और दवाब महत्वपूर्ण है। राहुल गांधी से एच.एल. दुसाध जैसे बहुजन बुद्धिजीवियों की उम्मीदें कांग्रेस की राजनीति में क्या असर डालेंगी यह वक्त बताएगा! दुसाध जी भारत जोड़ो यात्रा को बेहद उम्मीद की दृष्टि से मूल्यांकित कर रहे हैं। वे इस यात्रा को दांडी यात्रा की तरह ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण मान रहे हैं। भारत जोड़ो यात्रा और कांग्रेस का रायपुर कन्वेंशन इस किताब के लिए दो प्रस्थान बिंदु हैं।

इन पंक्तियों के इस लेखक ने पिछले डेढ़ दशक से राहुल गांधी की वर्धा, यवतमाल यात्राओं को देखने, कवर करने और उसके इम्पैक्ट को समझने का काम किया है। आलोचनात्मक दृष्टि से रिपोर्ट किया है, लिखा है। आगे भी राहुल गांधी को कांग्रेस के बेहद खराब दिनों में संघर्ष करते हुए देखा है। दुसाध जी की किताबों ने इस लेखक को भी नए सिरे से राहुल गांधी को समझने की वजह दी है। कांग्रेस हमेशा से विविध विचारों का समुच्चय रहा है। राहुल गांधी के समक्ष चुनौतियाँ वही हैं, जो जवाहर लाल नेहरू के समक्ष थीं। देश को प्रगतिशील विचारों और समावेशी समाज की ओर ले जाने की चुनौतियों का वे बाहर-भीतर से मुकाबला कर रहे थे और राहुल गांधी के सामने भी वे चुनौतियाँ अभी शेष हैं। उन्हें विक्टिमाइज किया जाता रहा है, यह सच है। आरएसएस के बेहद लम्बे अभियान में यह उन्हें विक्टिमाइज किये जाने की प्रक्रिया शामिल है। लेकिन जनता विक्टिमहुड को वोट नहीं करती। राहुल गांधी को विक्टिम से अधिक नेता की तरह नेतृत्व करना है। उन्हें प्रताड़ित जनता को प्रताड़ना मुक्ति का स्वप्न देना है, उसपर काम करना है।

यह किताब अपनी संवहनीयता की दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण है और राहुल गांधी के प्रति अपनी प्रस्तावना की दृष्टि से भी कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की सारी

कोशिशों और संसाधनों के बावजूद राहुल गांधी को पप्पू साबित करना मुश्किल रहा।

एक विशेष विश्लेषण पर इस किताब के लेखक और इन पंक्तियों के लेखक की खास सहमति है, हम कई बार बात भी करते रहे हैं कि राहुल गाँधी पीढ़ी-दर पीढ़ी धर्म और जाति की विविधता वाले अपने परिवार के कारण एक निर्जात व्यक्तित्व हैं-जाति और धर्म की सकीर्णताओं और स्वार्थों से मुक्त। यह भारतीय राजनीति के लिए सुखद अवसर की तरह है। इस विश्लेषण में मैं अपनी बात और जोड़ता रहा हूँ कि राहुल गाँधी को अपनी ऐतिहासिक भूमिका के प्रति और अधिक सजग, और अधिक न्यायपूर्ण और अधिक आत्म-आलोचनात्मक होना चाहिए। अंत में मैं वर्तमान हालात में अपनी ओर से कांग्रेस ही नहीं : पूरे 'इंडिया' गठबंधन को सुझाव देना चाहूंगा कि वह किताब में दिये गये इस निष्कर्ष पर गंभीरता से विचार करें—'मंडल के खिलाफ उभरे मंदिर आन्दोलन के जरिये नफरत की राजनीति को तुंग पर पहुंचा कर अप्रतिरोध्य बनी भाजपा के नरेंद्र मोदी ने जिस तरह वर्ग संघर्ष का इकतरफा खेल खेलते हुए राजसत्ता का इस्तेमाल हजारों साल के जन्मजात सुविधाभोगी के हित में किया है, वह नई सदी में वर्ग संघर्ष के इतिहास की अनोखी घटना है। इसी सुविधाभोगी वर्ग के हित में उन्होंने जिस तरह विनिवेश नीति को हथियार बनाकर सरकारी संस्थाओं एवं परिसंपत्तियों को निजी हाथों बेचा है; इसी वर्ग के हित में जिस तरह संविधान को व्यर्थ करने के साथ बहुजनों के आरक्षण को कागजों की शोभा बनाया है; इसी वर्ग के हित में जिस तरह संविधान की अनदेखि करते हुए आनन-फानन में ईडब्ल्यूएस के नाम पर सवर्णों को आरक्षण सुलभ कराने के साथ जिस तरह लैटरल इंट्री के जरिये अपात्र सवर्णों को आईएएस जैसे उच्च पदों पर बिठाने का प्रावधान रचा है, उससे यह मानकर चलना चाहिए कि सवर्ण आगामी 25 वर्षों तक अपना वोट भाजपा को छोड़कर अन्य किसी भी दल को, किसी भी सूरत में नहीं देने जा रहे हैं। ऐसे में कांग्रेस को सवर्णों के वोट से मोहमुक्त होने की मानसिकता विकसित करनी चाहिए।

संघ के असंख्य संगठनों, साधु-संतों, मीडिया एवं धन्ना सेठों के समर्थन से दुनिया की सबसे शक्तिशाली पार्टी बनी भाजपा को हराने जैसा आसान कोई पॉलिटिकल टास्क नहीं कोई, बशर्ते विपक्ष उसे चुनावों में सामाजिक न्याय की पिच पर खेलने के लिए बाध्य करने के साथ ही मोदी की नीतियों से उभरे सापेक्षिक वंचना (Relative Deprivation) के हालात का खुलकर सद्व्यवहार करे! ऐसे में कांग्रेस यदि 2024 में भाजपा को सामाजिक न्याय के पिच पर खिलाने का सफल उपक्रम कर सके तो भाजपा की विदाई और इंडिया की सत्ता में वापसी तय है।'

—संजीव चंदन

लेखकीय

मेरे पाठक मुझे प्यार से 'डाइवर्सिटी मैन ऑफ़ इंडिया' कहते हैं। वह इसलिए कि मेरा सम्पूर्ण लेखन व चिंतन डाइवर्सिटी पर केन्द्रित है : डाइवर्सिटी से अलग कुछ सोचता ही नहीं! ऐसा इसलिए है कि मेरे हिसाब से मानव सृष्ट सभी समस्याएं विविधता की अनदेखी का परिणाम हैं। आज अगर हम सैमुएल पी. हंटिंग्टन के सभ्यताओं के टकराव की भविष्यवाणी को लेकर चिंतित है तो इसलिए कि धार्मिक विविधता में शत्रुता की जो व्याप्ति है, उसका शमन करने में हम अबतक व्यर्थ रहे हैं। आज मानव जाति ग्लोबल वार्मिंग की समस्या से त्रस्त है तो इसलिए कि हमने अपने स्वार्थवश प्राकृतिक संसाधनों का इतना बेरहमी से इस्तेमाल किया कि मानव विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली जैव-विविधता (Bio-Diversity) की अपार क्षति हो गयी और क्षति पहुचाने का यह सिलसिला जारी रहा तो 2050 तक 10 करोड़ प्रजातियां धरा से विलुप्त हो जाएँगी : फिर तो ग्लोबल वार्मिंग की समस्या हमारे नियंत्रण से बाहर हो जाएंगी। आज अगर कई नए राज वजूद में आ चुके है तथा कुछ अलग राज्यों की मांग सर उठा रही है तो इसलिए कि हमने क्षेत्रिय विविधता (Regional Diversity) में व्याप्त असंतुलन से पार पाने का सम्यक कदम नहीं उठाया। सबसे बड़ी बात तो यह है कि जो आर्थिक और सामाजिक विषमता मानव जाति की सबसे बड़ी समस्या है तथा जिसके जठर से ही भूख-कुपोषण, गरीबी-अशिक्षा, आतंकवाद और विच्छिन्नता इत्यादि जैसी ढेरों समस्याएं जन्म लेती हैं, उसकी उत्पत्ति शक्ति के स्रोतों-आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक, धार्मिक- में सामाजिक (Social) और लैंगिक (Gender) विविधता (Diversity) के असमान प्रतिबिम्बन से होती है, यह तथ्य हमारे बुद्धिजीवियों की दृष्टि से प्रायः अगोचर रह गया। इसीलिए मैं आर्थिक और सामाजिक-विषमता से पार पाने के लिए शक्ति के स्रोतों में सामाजिक और लैंगिक विविधता के सम्यक प्रतिबिम्बन के लिए जुनून के साथ अपनी लेखनी को सक्रिय रखे हुए हूं। इस क्रम में मेरी डाइवर्सिटी केन्द्रित सात दर्जन से अधिक किताबें प्रकाशित हुई। इनमें से मेरी कुछ किताबें ऐसी शख्सियतों को लेकर तैयार हुई, जिन्होंने विविधता। को सम्मान देने तथा आर्थिक और सामाजिक विषमता से पार पाने में अपनी क्षमता का अतिरिक्त इस्तेमाल किया। इस क्रम में मेरी ओर से साहेब कांशीराम, मायावती जी, लालू प्रसाद यादव, रामविलास पासवान, जीतनराम मांझी, तेजस्वी यादव पर किताबें आईं। इसी कड़ी में राहुल गांधी पर यह किताब पाठकों के मध्य पहुंच रही है।

जहां तक राहुल गांधी का सवाल है, मेरी शुरू से ही धारणा रही है वह समग्र-वर्ग की उस चेतना से प्रचुर समृद्ध रहे हैं, जिस मामले में हमारे अधिकांश नेता

ही दरिद्र रहे। साथ ही यह भी विश्वास रहा है कि वह भारत को बेहतर बनाने में पंडित जवाहरलाल नेहरू जैसी छाप छोड़ सकते हैं। ऐसे में जिस तरह 2014 में कांग्रेस की अकल्पनीय पराजय के बाद अधिकांश राजनीतिक विश्लेषकों ने कांग्रेस के रूप में एक राजनीतिक युग के अंत की घोषणा करने के साथ राहुल गांधी को ख़ारिज करने एवं उन्हें पप्पू साबित करने का अभियान छेड़ा, उसका योग्य जवाब देने के लिए मैं 'राहुल गांधी : कल, आज और कल' जैसी किताब तैयार करने से खुद को नहीं रोक पाया। मैंने उस किताब में कुछ ऐसे नुस्खे सुझाये थे जिसका अनुसरण कर न सिर्फ कांग्रेस पुनर्जीवित हो सकती थी, बल्कि राहुल गाँधी पंडित नेहरु की बुलंदियों को छू सकते थे। बहरहाल इसे एक सुखद संयोग कहा जायेगा कि 2014 मैंने 'राहुल गाँधी : कल, आज और कल' के ज़रिये कांग्रेस के पुनरुद्धार का जो सपना देखा, वह साकार होता दिख रहा है। 2023 में आज की तारीख में भारतीय राजनीति पर नजर दौड़ाते हैं तो पातें है कि जो कांग्रेस 2014 में मोदी की सुनामी में आइसीयू में चली गयी थी; जिसे लेकर राजनीति के पंडितों ने एक राजनीतिक युग के अंत की घोषणा कर डाला थाः राजनीति के वही पंडित 2024 में उसी कांग्रेस में अप्रतिरोध्य बन चुकी भाजपा की जगह लेने की सम्भावना देख रहे हैं।

और जहां तक राहुल गाँधी का प्रश्न है, मीडिया द्वारा पप्पू के रूप में बहुप्रचारित वही राहुल गांधी आज सामाजिक न्याय की राजनीति के नए मसीहा तथा इंडिया की आशा और आकांक्षा का प्रतीक बन चुके हैं और मेरा दृढ़ विश्वास है कि वह स्वाधीन भारत में जन्मे सबसे शानदार नेता के रूप में इतिहास में जगह बनाने जरुर समर्थ होंगे। इस बात को प्रमाणित करने के लिए मैने 'सामाजिक न्याय की राजनीति के नए आइकॉन : राहुल गांधी' जैसी किताब तैयार की। किन्तु उस किताब का आकार कुछ बड़ा देखते हुए मैंने यह किताब तैयार करने का मन बनाया ताकि भारत से मानव जाति की सबसे बड़ी समस्या से पार पाने, नफरत की जगह मोहब्बत का बाजार लगाने तथा दलित, आदिवासी, पिछड़े, अल्पसंख्यकों और महिलाओं को : जिसकी जितनी आबादी, उसकी उतनी हिस्सेदारी दिलाने का राहुल गांधी का जो विजन है, वह जन-जन तक आसानी से पहुंच सके।

और शेष में! अशेष आभार प्रखर राजनीतिक चिंतक मान्यवर संजीव चंदन को जिन्होंने प्रस्तावना लिखकर इस किताब की गरिमा वृद्धि की है। यदि इस पुस्तक को पढ़कर पाठक यह उपलब्धि कर सकें कि इस देश के अधिकांश राजनीतिक के पंडितों की हैसियत एक रिपोर्टर से ज्यादा नहीं है और राहुल गांधी पप्पू नहीं, सामाजिक न्याय की राजनीति के नए मसीहा हैं तो ही अपने प्रयास को सार्थक मानूंगा।

जय भीम–जय भारत

दिनांक : 2 अक्तूबर, 2023

एच.एल. दुसाध

संस्थापक अध्यक्ष, बहुजन डाइवर्सिटी मिशन, दिल्ली

राहुल गांधी : सामाजिक न्याय की राजनीति के नए मसीहा

राहुल गांधी : सामाजिक न्याय की राजनीति के नए मसीहा वैसे तो मेरी नई किताब है, पर वास्तविकता यह है कि यह 'राहुल गांधी : कल आज और कल' का एक तरह से मिनी संस्करण जैसी है, जिसे राहुल गांधी की सामाजिक न्यायवादी विजन को जन-जन तक पहुचाने के मकसद से तैयार किया गया है। राहुल गांधी : कल, आज और कल मैंने 2014 में डॉ. अनीता गौतम के साथ मिलकर तब तैयार किया था, जब कांग्रेस मोदी की सुनामी में आईसीयू में पहुंच गयी थी। तब आज के सामाजिक न्याय के नए आइकॉन को जहां राजनीति के बड़े-बड़े पंडित पूरी तरह ख़ारिज कर दिए थे, वहीं हिन्दू मीडिया उन पर पप्पू की छवि चस्पा दी थी। बहरहाल 2014 में इस किताब के बारे में पाठकों को जानकारी देने के लिए बताया गया था *16 मई, 2014 को जब कांग्रेस की अकल्पनीय हार का चुनाव परिणाम आया, कई राजनीतिक विश्लेषकों को यह कहने में झिझक नहीं हुई कि मोदी की सुनामी ने कांग्रेस को आईसीयू में पहुंचा दिया है। इसी तरह कुछ ने जहां इसके भविष्य में टूटने की सम्भावना जता दी, वहीं कईयों ने कांग्रेस के रूप में एक राजनीतिक युग के अंत की घोषणा कर डाला। यही नहीं, सभी टिपण्णीकारों ने एक स्वर में राहुल गांधी की क्षमता पर सवाल उठाते हुए पार्टी की हार के लिए व्यक्तिगत तौर पर उन्हें ही जिम्मेवार ठहराया। कुछ ने तो पार्टी का वजूद बचाए रखने के लिए प्रियंका को नेतृत्व सौंपने का सुझाव तक भी दे डाला।*

चुनाव परिणाम आने के एक डेढ़ महीने बाद जब विभिन्न प्रान्तों के स्थापित कांग्रेसी स्थानीय नेतृत्व के खिलाफ बगावत के जरिये राहुल गांधी को खारिज करने का परोक्ष अभियान शुरू कर दिए, उनकी देखादेखी राजनीति के पंडितों में भी उन्हें ख़ारिज करने की होड़ मच गयी। किन्तु राजनीति के पंडित यह भूल गए कि जिस राहुल गांधी को वे ख़ारिज कर रहे हैं, उसी राहुल गांधी को उन्होंने पंद्रहवीं लोकसभा चुनाव में आज के नरेंद्र मोदी की भाँति ही तरह-तरह से सराहा था। पिछले लोकसभा चुनाव में कांग्रेस की निश्चित हार को जीत में बदलकर वह राजनीति के पंडितों की नज़रों में एक परिपक्व व करिश्माई नेता बन गए थे। उस चुनाव के बाद लोग उनमें

पंडित नेहरु का अक्स देखने लगे थे। बहरहाल देश के तमाम राजनीतिक दलों का रंग-ढंग देखते हुए कांग्रेस के दुश्मन भी नहीं चाहेंगे कि यह पार्टी ख़त्म हो! इसी तरह चूँकि राहुल गांधी को ही इस पार्टी को नेतृत्व देना है, इसलिए कोई भी लोकतंत्र प्रेमी नहीं चाहेगा कि वह चिरकाल के लिए ट्रेजडी नायक बन कर रह जाएँ। ऐसे में कांग्रेस और राहुल गांधी का पुनरुद्धार कैसे हो, इस पर गहराई से विचार करना हर बुद्धिजीवी का अत्याज्य कर्तव्य बन जाता है। इस दिशा में यह पुस्तक कुछ ऐसे नुस्खे सुझाती है, जिसका अनुसरण कर न सिर्फ कांग्रेस पुनर्जीवित हो सकती है, बल्कि राहुल गाँधी पंडित नेहरु की बुलंदियों को छू सकते हैं!

बहरहाल इसे एक सुखद संयोग कहा जायेगा कि 2014 में इस किताब के जरिये मैंने कांग्रेस के पुनरुद्धार का जो सपना देखा, वह साकार होता दिख रहा है। 2023 में आज की तारीख में भारतीय राजनीति पर नजर दौड़ाते हैं तो पातें है कि जो कांग्रेस 2014 में मोदी की सुनामी में आइसीयू में चली गयी थी, राजनीति के ढेरों पंडित 2024 में उसी कांग्रेस में अप्रतिरोध्य बन चुकी भाजपा की जगह लेने की सम्भावना देख रहे हैं। और जहां तक राहुल गाँधी का सवाल है, वह सामाजिक न्याय की राजनीति के नए आइकॉन तथा इंडिया की आशा और आकांक्षा का प्रतीक बन चुके हैं। वह किस हद लोगों को प्रभावित कर चुके हैं, इसका अनुमान इन पंक्तियों के लिखे जाने के दौरान भीषण अशांत मणिपुर की घटना से जुड़े एक पोस्ट से लगाया जा सकता है। फेसबुक पर Rizwan Aijazi नामक एक व्यक्ति ने लिखा है, 140 करोड़ में है कोई जो मणिपुर में नोआखाली जैसी मिसाल दे सके! इस पोस्ट पर Surendra Kumar का कमेंट रहा—*राहुल गांधी के सिवाय और कोई नहीं है भारत में! मुझे तो लगता है राहुल गांधी के रूप में महात्मा गांधी ने दोबारा जन्म लिया है। वह दुनिया को सत्य, अहिंसा और निःस्वार्थ सेवा का भाव सिखा रहे हैं, बल्कि वह तो महात्मा गांधी से कुछ कदम आगे लगते हैं। क्योंकि वह बच्चों को, बूढों को, बीमारों को गले लगा के उन्हें जूते तक पहनाते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि राहुल गांधी ने अपने आपको डी-क्लास कर दिया है, जो एक जननेता के लिए बहुत आवश्यक हैं। आज़ादी से पहले के हमारे महान कांग्रेसी नेताओं में जो गुण था, आज वह राहुल गाँधी में दिख रहा है।* सच में आज की तारीख में लोग उन्हें जननेता के रूप में अपने दिलों में जगह दे चुके हैं और उन्हीं से मोदी को शिकस्त देने की उम्मीद पाल रहे हैं। बहरहाल 2014 में अभूतपूर्व पराजय के बाद जिस तरह कांग्रेस और राहुल को ख़ारिज करने का सैलाब देश में उमड़ा, उस हालात में विरले ही कुछ राजनीतिक विश्लेषक रहे, जिन्हें यकीन था कि पंद्रहवीं लोकसभा चुनाव में जिस राहुल गाँधी में लोगों को पंडित नेहरु का अक्स दिखा था, उस राहुल गांधी का भविष्य में पुनरुद्धार हो सकता है। ऐसे चंद लोगों में यह लेखक भी रहा, जिसे पूरा यकीन था कि राहुल गांधी कहीं से भी ख़ारिज करने लायक नहीं हैंः उनमें

पंडित नेहरु के रूप में विकसित होने के सारे गुण हैं!

कैसे राहुल में दिखने लगेगी नेहरु की छवि!

2014 में जब कांग्रेस की अभूतपूर्व पराजय के बाद नेतृत्व परिवर्तन को लेकर बगावत के स्वर उभरने लगे, तब *कैसे हो कांग्रेस का पुनरुद्धार* शीर्षक से छपे अपने लेख में कहा था, *जहाँ तक राहुल का सवाल है, वह पूरी तरह से ख़ारिज करने लायक नहीं हैं। 2009 में उनका परफ़ॉर्मेंस देखकर बहुतों को पंडित नेहरु की याद आ गयी थी। बहरहाल कांग्रेस पार्टी की असल समस्या नेतृत्व नहीं, एजेंडा है। यह पार्टी अपने सवर्णवादी चरित्र से उबरने में व्यर्थ रही है, इसीलिए वह भागीदारीमूलक नहीं, राहत और भीखनुमा एजेंडों पर निर्भर रहकर चुनाव में उतरी और बुरी तरह मात खाई। यदि वह 21वीं सदी के वंचित वर्गों की आकांक्षा को समझते हुए शासन-प्रशासन और समस्त आर्थिक गतिविधियों में एससी/एसटी, ओबीसी और धार्मिक अल्पसंख्यकों को न्यायोचित हिस्सेदारी के मुद्दे पर चुनाव लड़तीः परिणाम भिन्न होता। बहरहाल आज यदि कांग्रेस सचमुच कोमा से उबरना चाहती है तो वह राहुल गांधी ही नेतृत्व में शक्ति के स्रोतों(आर्थिक-राजनीतिक-शैक्षिक- धार्मिक) में सामाजिक और लैंगिक विविधता का प्रतिबिम्बन कराने की लड़ाई लड़ने की घोषणा करे। ऐसा करने पर इस वर्ष के शेष में अनुष्ठित हो रहे विधानसभा चुनावों में ही वह चमत्कारिक परिणाम आएगा कि लोगों को 2009 के लोकसभा चुनाव की भाँति एक बार फिर राहुल में नेहरु की छवि दिखने लगेगी। पर, कांग्रेस के पुनरुद्धार की शतप्रतिशत सम्भावना के बावजूद सवाल पैदा होता है कि सोनिया-राहुल को घेरे रखनेवाले उनके सवर्ण सलाहकार क्या चाहेंगे कि कांग्रेस भारत के दलित/आदिवासी, पिछड़ों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं को हर क्षेत्र में हिस्सेदारी के एजेंडे पर अपनी आगे राजनीति स्थिर करें?'*

इसी तरह मैंने *कांग्रेस के पुनरुद्धार के लिए डाइवर्सिटी ही क्यों* शीर्षक से प्रकाशित अपने लेख में कहा था, *दरअसल कांग्रेस जैसे बड़े राजनीतिक संगठन से जुड़ा होना तथा नेहरु-गाँधी परिवार का वारिस होना राहुल के लिए जितना प्लस पॉइंट है, उससे कहीं ज्यादा यह माइनस पॉइंट बन गया है। कांग्रेसी डॉ. मनमोहन सिंह ही नहीं, पंडित नेहरु, इंदिरा गाँधी, राजीव गाँधी, नरसिंह राव इत्यादि की लोकतंत्र विरोधी आर्थिक नीतियों के कारण आज राहुल की स्थिति देश के सबसे लाचार नेता की बन गयी है। कांग्रेस के दिग्गजों की जिन ऐतिहासिक गलतियों ने राजीव-सोनिया तनय को बुरी तरह निस्तेज कर दिया है, उन्हीं गलतियों ने छोटे-बड़े तमाम गैर-कांग्रेसी नेताओं को महा-उर्जावान बना दिया है...। (मोदी आज भी कांग्रेस की कमियों को गिनाकर अपने को बेहतर बताने का प्रयास करते रहते हैं। इन पंक्तियों के लिखे जाने के दौरान उन्होंने गरीबी हटाओ के नारे पर निशाना साधते हुए कहा है कि*

असल में उन्होंने गरीबी हटाने के लिए कुछ नहीं किर्या जो काम वह पांच दशकों में नहीं कर सके, वह मैंने इतने कम समय में करके दिखाया है। (दैनिक जागरण, 13 अगस्त, 2023) हिंदी पट्टी का विशाल अंचल, खासकर यूपी-बिहार, जहां से राष्ट्रीय राजनीति की दिशा तय होती है, में जाति चेतना का प्रबल राजनीतिकरण ही कांग्रेस और राहुल गाँधी की राह में सबसे बड़ी बाधा है। यह जाति चेतना का राजनीतिकरण ही है जिसके चलते 2009 के लोकसभा चुनाव में एक नायक के रूप में उभरे राहुल गाँधी को 2010 में बिहार और 2012 में उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव में एक ट्रेजडी नायक के रुप में तब्दील हो जाना पड़ा। उसी बात की पुनरावृति फिर लोकसभा चुनाव-2014 में भी हुई है तो इसलिए कि शक्ति के स्रोतों में सामाजिक और लैंगिक विविधता के प्रतिबिम्बन से परहेज के कारण जो कांग्रेस दलित, आदिवासी, पिछड़ों, अल्पसंख्यकों से कटकर रह गई है, उस कांग्रेस के सवर्ण रणनीतिकारों ने राहुल को राहत और भीखनुमा घोषणाओं के हथियार के साथ चुनावी जंग में उतार दिया। जिन दलित, पिछड़ों इत्यादि वंचित वर्गों में नौकरियों से आगे बढकर उद्योग-व्यापार में भागीदारी की चाह पैदा हो चुकी हो, उन्हें नरेगा, मनरेगा के सहारे संतुष्ट करने का जो परिणाम सामने आना चाहिए, वह आ रहा है। इन वंचित तबकों द्वारा लगातार नकारे जाने का असर ही राहुल के राजनीतिक शैली पर पड़ा है। उनमें वह जोश नहीं दिख रहा है, जो राजनीति के युद्ध-क्षेत्र में अपेक्षित प्रभाव छोड़ने के लिए चाहिए। ऐसे में जरुरत है राहुल को ऐसे मुद्दों पर राजनीति करने की जिसके सहारे न सिर्फ कांग्रेस के पापों का प्रायश्चित हो सके बल्कि दलित, आदिवासी, पिछड़े, अल्पसंख्यक और महिलाएं इत्यादि नए उमंग के साथ कांग्रेस से जुड़ सकें। और ऐसा इकलौता मुद्दा है शक्ति के स्रोतों में सामाजिक और लैंगिक विविधता का प्रतिबिम्बन। चूँकि शक्ति के स्रोतों में सामाजिक और लैंगिक विविधता का प्रतिबिम्बन न करने से ही कांग्रेस की ऐसी दुर्गति हुई है, इसलिए इस दुरावस्था से उबरने का भी एकमात्र वैज्ञानिक समाधान शक्ति के स्रोतों में सामाजिक(सोशल)और लैंगिक(जेंडर) विविधता (डाइवर्सिटी) का प्रतिबिम्बन ही है। जब कांग्रेस डाइवर्सिटी के मुद्दे पर अपनी राजनीति स्थिर करेगी, तब शक्ति के स्रोतों से बुरी तरह वंचित सामाजिक समूह सेना-न्यायपालिका सहित सरकारी और निजी क्षेत्र की सभी प्रकार की नौकरियों, सप्लाई, डीलरशिप, ठेकों, पार्किंग, परिवहन, फिल्म-टीवी इत्यादि प्रत्येक क्षेत्र में ही अपनी हिस्सेदारी पाने की सम्भावना देख कर पहले की तरह फिर कांग्रेस के साथ जुड़ जायेंगे। ऐसा होने पर जहाँ कांग्रेस अपने पापों का प्रायश्चित कर लेगी वहीं, उन्हें राहुल के रूप में 21वीं सदी का नया नेहरु मिल जायेगा। किन्तु कांग्रेस को इसके लिए कुछ खोना पड़ेगा। खोना यह पड़ेगा कि उसकी नीतियों के कारण जिन अल्पजन सवर्णों का शक्ति के स्रोतों पर प्रायः एकाधिकार स्थापित हुआ है, वह टूट जायेगा। क्या सवर्णवादी कांग्रेस के रणनीतिकार राष्ट्र, राहुल और 128 साल पुरानी पार्टी के हित में डाइवर्सिटी सिद्धांत

अपनाने की जोखिम लेंगे?

भारी खुशी की बात है कि जो दलित-आदिवासी, अल्पसंख्यक कांग्रेस की असल ताकत रहे कांग्रेस के रणनीतिकारों ने उनकी अहमियत को पहचाना और फ़रवरी 2023 में रायपुर अधिवेशन में 136 साल पुरानी अपनी पार्टी के इतिहास में पहली बार सामाजिक न्याय का पिटारा खोल दिया। उसके कुछ माह बाद जिस तरह कर्णाटक चुनाव को सामाजिक न्याय पर केन्द्रित करके दुनिया की सबसे ताकतवर पार्टी के खिलाफ ऐतिहासिक विजय दर्ज किया, उससे जहां कांग्रेस का पुनरुद्धार हुआ, वहीं राहुल गाँधी रातो-रात सामाजिक न्याय की राजनीति के नए आइकॉन बन गए। लेकिन राहुल गाँधी पप्पू से सामाजिक न्याय के नए आइकॉन कैसे बन गए इसे ठीक से जानने के लिए 2014 में वापस जाना पड़ेगा, जब 16 मई, 2014 को सोलहवीं लोकसभा चुनाव का परिणाम घोषित होने के बाद कांग्रेस आईसीयू में चली गयी थी।

2014: मोदी की सुनामी बाद राजनीति के पंडितों की नज़रों में राहुल गाँधी!

16 मई, 2014 को सोलहवीं लोकसभा का जो चुनाव परिणाम आया, उसे राजनीतिक विश्लेषकों ने मोदी की सुनामी करार दिया। चुनाव परिणाम बाद देखा गया कि भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में राजग को 336 जबकि भाजपा को 282 सीटें आई हैं। भाजपा पिछले 30 वर्षों में लोकसभा चुनाव में अपने दम पर बहुमत हासिल करने वाली पहली पार्टी बनकर उभरी, जिसे 31.0 प्रतिशत वोट मिले थे। भाजपा के विपरीत कांग्रेस 19.3% वोट पाकर महज 44 सीटें जीतने में सफल हुई थी। कांग्रेस के नेतृत्व में चुनाव लड़ने वाली संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन को सिर्फ 59 सीटें मिली थीं। तब भाजपा महज 31.0% वोट पाई थी जो आजादी के बाद से भारत में बहुमत वाली सरकार बनाने वाली पार्टी का सबसे कम वोट प्रतिशत था। बहरहाल भारत में आधिकारिक विपक्षी दल बनने के लिए 10% प्रतिशत सीटें जीतना जरुरी होता है। इस लिहाज से कांग्रेस को विपक्षी दल का दर्जा पाने के लिए 54 सीटें जीतना जरुरी था, पर वह 44 सीटों पर सिमट कर विपक्षी दल का दर्जा पाने में भी विफल रही। उसके बाद मीडिया और राजनीतिक विश्लेषकों ने जो उसकी खबर ली, वह कांग्रेस के लिए दुःस्वप्न बनकर रह गया!

चुनाव परिणाम आने के बाद *अमर उजाला* ने देश के राजनीति की दिशा तय करने वाले उत्तर प्रदेश को केन्द्रित करते हुए 17 मई को *कांग्रेस को हर दांव पड़ा उल्टा* शीर्षक से अपनी सम्पादकीय में लिखा-*चुनाव दर चुनाव अपनी सियासी जमीन दरकने से परेशान कांग्रेस को इस बार लोकसभा चुनाव में हर दांव उल्टा पड़ा। एक ओर यूपी का सशक्त नेतृत्वविहीन कांग्रेस जर्जर संगठन तो दूसरी तरफ हर हथियारों से लैस टीम मोदी। चुनाव मैदन में शुरुआती दौर से ही कांग्रेस हर मोर्चे पर रक्षात्मक मुद्रा में नजर आई। सूबे में मैदान मारना तो दूर, कांग्रेस के पास*

पहले से जो था, उसे भी गंवा बैठी। पार्टी 22 सीटो से सिमटकर दो पर आ खड़ी हुई। सोनिया- राहुल को छोड़ पार्टी के सभी सूरमा खेत रहे। कांग्रेस के चुनाव अभियान की कमान पार्टी उपाध्यक्ष राहुल गाँधी व उनकी युवा टीम ने संभाल रखी थी। जमीनी हकीकत से कोसो दूर कंप्यूटरी आंकड़ों से माहौल का आंकलन करने वाली इस टीम को लेकर पार्टी के पुराने दिग्गज नेताओं की नाराजगी भी कांग्रेस को भारी पड़ी। सूबे में चुनाव को लेकर कांग्रेस इस बार शुरू से ही ढीली पड़ी थी। प्रत्याशी चयन से लेकर प्रचार अभियान तक सब कुछ बिखरा-बिखरा दिखाई दिया। ऐसा लगता है राहुल गाँधी के कारण ही पार्टी की हार हुई, इस बात का संकेत करते हुए *बेटे को बचाने के लिए फिर आगे आईं सोनिया* शीर्षक से 17 मई को दैनिक जागरण ने लिखा—*कांग्रेस पार्टी की हार के बाद मीडिया से मुखातिब हुई कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी ने हार की जिम्मेवारी स्वीकार की। बेपरवाही के भाव और और फीकी मुस्कान के साथ पार्टी उपाध्यक्ष राहुल गाँधी ने भी चुनावी हार कबूल की। सोनिया ने राहुल का बचाव करते हुए कहा, पार्टी अध्यक्ष होने के नाते जिम्मेवारी उनकी है और वह इसे स्वीकार करती हैं। राहुल गांधी के नेतृत्व में लड़े गए लोकसभा चुनाव के परिणामों के बाद मीडिया से मुखातिब सोनिया पार्टी अध्यक्ष कम, एक माँ ज्यादा लग रही थीं। अपना बयान पढ़ने के बाद पत्रकारों ने जब सवाल दागे तो पत्रकारों को न कहते हुए सोनिया ने ठिठके राहुल को साथ आने का इशारा करते हुए सवालों से बचाया। यही नहीं राहुल ने जब हार की जिम्मेवारी स्वीकारी तो सोनिया खासी नाराज नजर आईं।*

अगले दिन अर्थात 18 मई, 2014 को *प्रियंका लाओ, कांग्रेस बचाओ* शीर्षक से भाजपा के मुखपत्र के रूप चर्चित दैनिक जागरण ने फिर राहुल को व्यर्थ साबित करते हुए अपने सम्पादकीय में लिखा, *सबसे बड़ी पराजय के बाद कांग्रेसियों का मोह राहुल गांधी से तो भंग होता दिख रहा है, लेकिन इस संकट से उबरने की कोशिश कर रही कांग्रेस अब भी गांधी परिवार से आगे नहीं देख पर रही है। लोकसभा चुनाव के दौरान प्रियंका लाओ, कांग्रेस बचाओं के मद्धिम सुर नतीजों के बाद बुलंद हो रहे हैं। संगठन की कमान प्रियंका गांधी को देने के लिए अगले कुछ दिन में पूरे देश में आवाज बुलंद होने के स्पष्ट संकेत मिलने लगे हैं। सूत्रों के मुताबिक़, राहुल गांधी की कार्यशैली से खफा पार्टी के बुजुर्ग नेता इन नतीजों के बाद अब अपना अभियान तेज करेंगे। वैसे तो चुनाव के बीच ही कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गांधी के संगठन व सरकार से अलग अपने ही अंदाज़ में काम करने और पुराने नेताओं को भाव न देने पर पहले ही सवाल खड़े हो रहे थे। उसी समय संगठन के बीच समन्वय को लेकर संकट पैदा हो गया था। राहुल ने कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी के विश्वस्त रहे पुराने नेताओं को पूरी तरह किनारे करने की कोशिश की। यही नहीं राहुल के करीबियों का मानना था कि उनकी नीतियों से कांग्रेस को नुकसान हो*

रहा है। बहरहाल चुनाव परिणाम आने के बाद ऐसा नहीं कि सिर्फ अमर उजाला या दैनिक जागरण ने ही कांग्रेस की पराजय के लिए राहुल गाँधी को जिम्मेवारी ठहराने व उन्हें व्यर्थ नेता साबित करने की मुहिम छेड़ा, बल्कि अधिकांश अख़बारों का रवैया भी जागरण और अमर उजाला जैसा ही रहा। पर, क्या कांग्रेस की दुर्गति के लिए सिर्फ अख़बारों ने ही राहुल गाँधी को निशाने पर लिया : यदि राजनीतिक विश्लेषकों की टिप्पणियों पर ध्यान दिया जाय तो पता चलेगा, उन को व्यर्थ साबित करने में देश के बड़े-बड़े राजनीति के पंडित भी बहुत पीछे नहीं रहे!

नीरजा चौधरी की पहचान देश के बड़े राजनीतिक विश्लेषकों में होती है। वह प्रायः हर रोज टीवी पर पॉलिटिकल डिबेट में शामिल होती हैं : अख़बारों में लेख लिखती हैं और आज शायद इंडियन एक्सप्रेस जैसे बड़े अख़बार से जुड़ी हुई हैं। कांग्रेस की भारी पराजय के बाद उन्होंने *टूट भी सकती है कांग्रेस* शीर्षक से जुड़े अपने लेख में कहा था, *लोगों को एक निर्णायक नेतृत्व की तलाश थी, जो उन्हें नरेंद्र मोदी में दिखी। इसलिए जनता ने नरेंद्र मोदी को बहुमत से जिताया, ताकि वे लोगों की आकांक्षा को निर्बाध पूरा कर सकें...जहां तक कांग्रेस का सवाल है, वह अपने सबसे बुरे दौर से गुजर रही है। आपात काल के बाद जब इंदिरा गाँधी हारी थीं, तो बहुत कम समय में उन्होंने वापसी की थी। लेकिन अभी कांग्रेस में वैसा कोई करिश्माई नेतृत्व नहीं दिख रहा है, जो कांग्रेस को इस कठिन घड़ी से उबार सके। अब भी कांग्रेस के नेता इस हार के लिए सामूहिक जिम्मेवारी की बात करते हैं। यह एक तरह से सोनिया और राहुल गाँधी को बचाने जैसा है।* उन्होंने आगे कहा था, *अगर कांग्रेस ने अपने नेतृत्व में बदलाव पर विचार नहीं किया तो, इस बात का भी जोखिम है कि कहीं पार्टी टूट न जाए। ऐसा होगा ही, यह तो नहीं कहा जा सकता, लेकिन हो सकता है कि कांग्रेस के कुछ नेता कुछ पुराने कांग्रेसियों, जो पार्टी में एक परिवार के वर्चस्व के कारण बाहर जा चुके हैं, के साथ मिलकर अलग समूह बना लें। कांग्रेस को अब बिलकुल सतह से शुरुआत करनी होगी और पार्टी कार्यकर्ताओं में जोश भरने के लिए कुछ ठोस कदम उठाने होंगे। ऐसे में यह तो हो सकता है कि कांग्रेस अब प्रियंका गांधी को आगे लाए।* (अमर उजाला, 17 मई, 2014)।

पंजाब केशरी के संपादक अश्विनी कुमार भारतीय पत्रकारिता के बड़े नाम रहे हैं, जो सोलहवीं लोकसभा चुनाव में सांसद भी बनने का गौरव प्राप्त किये थे। *मां-बेटे के भेंट चढ़ी कांग्रेस* शीर्षक से छपे अपने लेख में उन्होंने बड़ी दृढ़ता से लिखा था, *कांग्रेस का जीर्णोद्धार का सबसे नायाब 'गनी खान' फ़ार्मूला मेरे पास है। अगर कांग्रेसियों में हिम्मत है तो वे नेहरु-गांधी खानदान के सहारे को छोड़कर अपने पैरों पर खड़े होने की ताकत रखते हुए मौजूदा 'मा-बेटे' की कांग्रेस पार्टी को बंगाल की खाड़ी में बहा दें और मीरासियों की तरह सोनिया व राहुल गांधी के नाम का ढ़ोल*

बजाना बंद करे। इस देश की जनता ने राहुल गाँधी को कभी राजनीतिज्ञ की श्रेणी में रखा ही नहीं। मगर दिल है कि मानता ही नहीं और वह हर सूरत में 129 साल पुरानी इस पार्टी का जनाजा निकालने का सामान अच्छी तरह से जुटाना चाहती है। इस देश के 70 प्रतिशत युवा मतदाताओं को राहुल गांधी में नेतृत्व की कोई क्षमता नजर नहीं आती है। वह अपनी मां के लाडले हो सकते हैं, मगर भारत के मतदाताओं के लाडले नहीं बन सकते! आखिरकार कोई हद तो होगी कर्जा चुकाने की कि नेहरु के बाद इंदिरा गांधी, इंदिरा गांधी के बाद राजीव गांधी, राजीव गांधी के बाद सोनिया गाँधी और सोनिया गांधी के बाद राहुल गाँधी। 21वीं सदी के लोकतंत्र में इस मुगलिया खानदान की सियासत ख़त्म होनी चाहिए और कांग्रेसियों को अपना नेता खुद ढूँढना चाहिए। मीरासियों की तरह गला फाड़-फाड़ कर राहुल भैया की जय बोलने में लोग उनका साथ नहीं देंगे (पंजाब केशरी, 20 मई, 2014)।

अकेला पड़ गया हाथ, नहीं मिला साथ शीर्षक से अपने लेख में सरोज नागी ने लिखा था, *मोदी की सुनामी ने कांग्रेस को आईसीयू में पहुंचा दिया है। वो कोमा में पहुंच चुकी है और निकट भविष्य में उसकी तबियत में सुधार का कोई संकेत दिखाई नहीं दे रहा है। पार्टी का नेतृत्व हर स्तर पर नाकाम रहा, खासतौर से पिछले दो साल में, डॉ. मनमोहन सिंह बढ़ती कीमतों, मंहगाई और अपने मंत्रिमंडल के भ्रष्टाचार को रोकने के लिए कुछ नहीं कर सके। ढिंढोरा पीटने के लिए कोई बड़ी उपलब्धि नहीं थी और खाद्य सुरक्षा अधिनियम इतना देरी से लाया गया कि बिगड़ी बात बन न सकी। सोनिया ने राहुल पर आँख मूंदकर भरोसा किया, जबकि हर बात इस बात का प्रमाण थी कि वो नए और उभरते भारत के नेतृत्व की चुनौतियों से निबटने में सक्षम नहीं हैं : वे नदारद रहते हैं संसद के अन्दर और बाहर। उनमें विजन की कमी है, पार्टी नेताओं, सदस्यों, कार्यकर्ताओं और जनता के साथ वे जुड़ने में असमर्थ हैं। इन सब बातों ने पार्टी को नुकसान पहुँचाया है। पार्टी के समक्ष नेतृत्व की गंभीर समस्या है। सामाजिक आधार को मजबूत करने और सामाजिक और भौगोलिक रूप से सिमटते हुए संगठन के पुनरुत्थान की चुनौती है। ये काम हिमालय की किसी दुर्गम चढ़ाई से कम मुश्किल नहीं है। कांग्रेस संगठन में बदलाव के समय कार्यसमिति का सदस्य बना कर प्रियंका गांधी को कोई पद दे दिया जाय ताकि वह राहुल के साथ खुलकर काम करने लगें।* (राजस्थान पत्रिका, 19 मई, 2014)।

कहीं अपने ही न छोड़ दें हाथ का साथ शीर्षक से अपने लेख में आशंका जताते हुए रणविजय सिंह ने कहा था—*सोलहवीं लोकसभा के जनादेश से यह तय हो चुका है कि बगैर दशा और दिशा बदले अब कांग्रेस का राजनीतिक तौर पर कोई भला होने वाला नहीं है । उसे अब एक करिश्माई नेतृत्व की दरकार है, अन्यथा इस हार के बाद पार्टी से होने वाले पलायन को रोक पाना उसके वश में नहीं होगा। सोनिया गांधी की रिमोट कण्ट्रोल की राजनीति, चापलूसों की घेराबंदी और राहुल*

की कमजोर राजनीतिक कौशल के कारण कांग्रेस की यह दुर्गति हुई है। दस जनपथ से देश चलाने में गांधी परिवार का शौक पार्टी पर भारी पड़ा। फलतः पार्टी जनता से कट गयी और जनता के मनोभाव को समझ न सकी। सोनिया गाँधी इस घमंड में चूर थीं कि नाकामियों के बावजूद वे खैरात बाँट कर तीसरी बार सत्ता हासिल कर लेंगी। किन्तु ऐसा नहीं हुआ! हमें 1998 के चुनाव के बाद का मंजर राजनीतिक मंजर बरबस याद आ रहा है। उस समय भी अलोकप्रियता के निचले पायदान पर पहुंची कांग्रेस नए सिरे खड़ा होने के लिए गांधी परिवार (सोनिया गांधी) के शरण में गयी थी। इस बार क्या सोनिया गांधी राहुल के आकर्षण को बनाये रखने के लिए प्रियंका का सहारा लेंगी? (राष्ट्रीय सहारा, 18 मई, 2014)।

क्या राहुल की जगह प्रियंका के होने से परिणाम भिन्न होता!

बहरहाल सोलहवी लोकसभा चुनाव का परिणाम आने के बाद राहुल गाँधी को ख़ारिज करने में व्यस्त बहुत से पत्रकारों को लगता था कि राहुल की जगह अगर प्रियंका गाँधी होतीं, कांग्रेस की स्थिति इतनी बुरी नहीं होती। ऐसे लोगों में अरुणा सिंह ने खुलकर कह दिया था, *हां, अगर चुनाव का नेतृत्व राहुल गांधी की बहन प्रियंका गांधी कर रही होतीं तो स्थिति कुछ और होती। जब कांग्रेस अपने चुनाव प्रचार के लिए प्रियंका गांधी- वाड्रा को आगे लेकर आई। तब प्रियंका ने आक्रामक ढंग से जनता से अपनी बात कही। लेकिन यह बात अभी तक समझ में नहीं आ रही है कि चुनाव प्रचार का मोर्चा प्रियंका को सौपने के लिए चुनाव का आधा सफ़र पार करने के बाद का यह समय ही क्यों चुना गया, जब चुनाव प्रचार का दौर समाप्त होने जा रहा था।* (शुक्रवार, 23-29 मई, 2014)। अरुणा सिंह की भांति प्रियंका गांधी में भरोसा जताते हुए आशुतोष मिश्र की टिपण्णी रही, *हो सकता है कि पतन की पराकाष्ठ पर पहुंचने के बाद कांग्रेस प्रियंका पर दांव लगाये। यह कहना कठिन है कि सार्वजनिक जीवन में प्रियंका कितनी सफल होंगी, लेकिन उनमें सहज संपर्क, संप्रेषण, वक्तृत्व और नेतृत्व की क्षमता दिखती है।* (दैनिक जागरण, 2 अगस्त, 2014)। बहरहाल रणविजय सिंह, अरुणा सिंह और आशुतोष मिश्र जैसों के विपरीत चर्चित पत्रकार राजकिशोर न सिर्फ कांग्रेस की हार पर संतुलित राय जाहिर किये बल्कि यह भी बताये थे कि प्रियंका के हाथ में नेतृत्व देने से परिणाम बहुत अलग नहीं होता। उन्होंने अपने लेख *राहुल क्यों हारे, प्रियंका क्या करेंगी!* में लिखा था, *अब एक और नया सिद्धांत सामने आया है- प्रियंका को लाओ। राहुल की बजाय प्रियंका गाँधी शुरू से ही कांग्रेस नेताओं और कार्यकर्ताओं की पहली पसंद रहीं हैं। दरअसल, वे चाहते प्रियंका को ही थे, पर उनके गले राहुल बाँध दिए गए। अभी तक इंतजार किया जा रहा था कि राहुल गांधी क्या करके दिखाते हैं। अब कांग्रेस के लोग हताश हो गए हैं। वे एक नया नेता की खोज में हैं। यह एक विचित्र घटना है। और जगह*

Continue Your Reading Journey

This preview has ended. Access the complete library and support our mission.

Join Our Inclusive Reading Community

✓ We champion diverse voices and perspectives

✓ Your support helps amplify underrepresented authors

✓ We provide free access to educational institutions

✓ Building bridges through shared stories

✓ Creating space for all narratives to be heard

Support Our Mission

Your donation enables us to:

• Curate diverse book collections

• Support authors from marginalized communities

• Provide free resources to educators

• Maintain our accessible digital library

Visit: www.diversitymission.in

Sign the diversity pledge • Make a donation • Download full library